विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

कभी आदिवासियों के लिए भी सोचें ?

• वेदव्यास •

वैसे तो पूरी दुनिया ही हमारा कुटुम्ब है और 21वीं शताब्दी में सम्पूर्ण भू–मंडल ही हमारा गांव है तो सबका साथ–सबका विकास ही हमारा नया नारा है। लेकिन हकीकत ये है कि यहां सब कुछ गैर बराबरी से पीड़ित और वंचित है। उदाहरण के तौर पर जैसे शहरी और ग्रामीण आबादी का जीवन जमीन और आसमान के अंतर से जूझ रहा तो गरीब और अमीर की खाई शताब्दियों से लगातार बढ़ती जा रही है। संविधान में जब समता और बंधुत्व की बात होती है तो सहसा हमें ऐसा भी अनुभव होता है कि देश में सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक भेदभाव का अनुपात कदम–कदम पर हमारे विकास और परिवर्तन की चुनौती बना हुआ है और आरक्षण तथा संरक्षण की सभी योजनाएं और अवधारणाएं सिर से पैर तक निष्फल साबित हो रही है। आजादी की सारी लड़ाई अब हमारे देश में दलित, आदिवासी, महिलाएं और अल्पसंख्यकों की समान नागरिक अधिकार पाने में सिमटी है क्योंकि हम सामाजिक–आर्थिक न्याय के क्षेत्र में बेहद, असहिष्णु बने हुए हैं। हमारी आबादी अंधेरे में है।

आए दिन समाचार और विचार के दंगल में हम यही देखते हैं कि चारों तरफ निराधार के आधार कार्ड तो बन रहे हैं लेकिन दलित, आदिवासी महिलाएं और अल्पसंख्यकों को लेकर हमारी मानसिकता आज भी संकीर्ण कटुताओं से भरी है तथा हम निरंतर मनुष्य को मूल अधिकारों से ही हाशिए पर धकेल रहे हैं। यही कारण है हमारे विकास के सभी मॉडल, जाति धर्म, क्षेत्र और भाषाई असमानताओं में विभाजित हैं तथा हम सर्वसम्पन्न और सर्वहारा को ही एक लाठी से हांक रहे हैं। हम अपनी राज्य व्यवस्था में हिंसा–प्रति हिंसा की ऐसी दीवारें खड़ी कर रहे हैं कि जिसके परिणामस्वरूप एक तरफ तो भारत में डिजिटल इंडिया का जन्म हो रहा है तो दूसरी तरफ पहचान और सम्मान के लिए दलितों में जल, जंगल और जमीन का अधिकार मांगने वाले को नक्सलवादी बताया जा रहा है तो घर–घर महिलाओं पर लिंग भेद का आतंक मचाया जा रहा है तो पांचवीं तरफ अल्पसंख्यकों को राष्ट्रवाद पढ़ाया जा रहा है।

भारत में विकास की सभी संभावनाएं अब कुछ इस तरह संचालित हो रही हैं कि हाशिए पर लंगोटी बांधकर खड़ा आदिवासी तो चौपाल की सभी चर्चाओं से बाहर है तथा शिक्षा, स्वास्थ्य, रोटी, कपड़ा, मकान जैसी कोई भी फरियाद जंगल से राजधानी तक नहीं पहुंच रही है तो उड़ीसा का दीना मांझी अपनी पत्नी की लाश को कंधे पर रखकर मीलों तक पैदल ही चला जा रहा है। राजस्थान के आदिवासी की व्यथा–कथा कुछ इस तरह समझी जा सकती है कि वो सैकड़ों साल के बाद भी मौताणे की प्रथा से ही आजाद नहीं हुआ है और भारत के स्वतंत्रता संग्राम में उसके संघर्ष और बलिदान का कहीं कोई उल्लेख ही नहीं है। यहां गोविंद गुरु और मोतीसिंह तेजावत को किसी पाठ्यक्रम में ही नहीं पढ़ाया जाता और महाराणा प्रताप के हवाले से किसी आदिवासी (भील) सेना का नाम भी नहीं लिया जाता। आप कभी प्रदेश की कोई 50 से अधिक आदिवासी जातियों की सरकारी सूची को पढ़ेंगे तो आपको पता चलेगा कि जंगल के ये सभी दावेदार अधिकतर निरक्षर हैं और पहाड़ी तथा पठारी ख्लावों पर झोंपड़ी बनाकर रहते हैं। जंगल से आगे इन्होंने कुछ नहीं देखा–सुना है और प्रकृति की गोद ही इनका जीवन है। आप आश्चर्य करेंगे कि जंगल के मूल निवासी होकर भी इनके पास अपनी भूमि का कोई हक नहीं है तथा सामाजिक सुधार का कोई अभियान इन तक कभी नहीं आता। विकास और मानवाधिकारों की मशाल लेकर पहली बार श्रीलता स्वामीनाथन जब चैन्नई (तमिलनाडु) से 1978 में घंटाली (बांसवाड़ा) आईं, तो इन आदिवासियों को पता चला कि हम भारत के लोग बाहर की दुनिया से कितनी दूर हैं और अधिकार की बात करने वालों को हमारा लोकतंत्र कैसे आतंकवादी और नक्सलवादी बताकर मारता है तथा अत्याचार करता है। श्रीलता स्वामीनाथन 74 वर्ष की आयु तक इन आदिवासियों के बीच ही रहीं और 28 जनवरी 2017 को उदयपुर में दिवंगत हो गईं लेकिन आदिवासियों के जन प्रतिनिधि और जंगल के ठेकेदार आज तक ये नहीं बता पा

जारी

इस अंक में...

- कभी आदिवासियों के लिए भी सोचें?
- मातृत्व अधिकारः महिलाओं के साथ भेदभाव और धोखा
- जनसंख्या वृद्वि का सांप्रदायिकीकरण
- स्त्री,सेहत और शौचालय
- राजस्थानी का कोई धणी धोरी नहीं है
- सरकारी योजना की बाट जोहते हार गए पालनहार
- दिल्ली की बस्तियों में भी भूख और अभाव से संघर्ष
- 'नरेगा–बचाओ'संघर्ष का किया एलान
- असंगठित क्षेत्र में पेंशन का लंबा इंतजार
- सीमेंट फैक्ट्री के लिए जमीन खाली करवाने पर तुली है सरकार

रहे हैं कि विकास और मानवाधिकारों का एक आदिवासी के जीवन में क्या अर्थ है? और क्या आवश्यकता है? आपको याद होगा कि सूचना का अधिकार लेकर भी चैन्नई से राजस्थान में अरुणा रॉय ही आई थीं और पानी का अधिकार लेकर उत्तर प्रदेश के राजेंद्र सिंह ही राजस्थान में आए थे। इस तरह सोचने की बात यही है कि राजस्थान में पुर्नजारण और मानवाधिकारों की मुहिम लेकर कोई न कोई गैर आदिवासी और गैर हिंदी भाषी ही क्यों आता है और राजस्थान के निवासी होकर भी हम आप अपने आदिवासी और दलित भाइयों के लिए कभी कोई विकास और नागरिक अधिकारों की बात क्यों नहीं उठाते हैं?

इधर आदिवासी चेतना को लेकर काम कर रहे स्वर्गीय बीपी वर्मा पथिक (उदयपुर), हरिराम मीणा (जयपुर), डॉक्टर रमेश चंद मीणा (बूंदी) और अरावली उद्घोष (त्रैमासिक) के संपादक डॉक्टर जनक सिंह मीणा (जोधपुर) तथा हिम्मत सेठ (समता संदेश) उदयपुर को जब मैं देखता हूं तो मुझे मामा बालेश्वर प्रसाद और भैरूलाल काला बादल जैसे विधायकों का और स्वर्गीय विजय सिंह पथिक का संघर्ष भी याद आता है और लगता है कि शोषित और वंचित आदिवासियों के सुख–दुःख पर कोई चर्चा और विमर्श हम क्यों नहीं करते? डॉक्टर रमेश चंद्र मीणा की पुस्तक आदिवासी दस्तक (विचार, परंपरा और साहित्य) एक बार अवश्य पढ़े। शायद आप जान सकेंगे कि भारत में आदिवासी होने की क्या चुनौतियां हैं और हम सब उनके साथ नस्लभेद, रंगभेद और अधिकारों का भेद–विभेद क्यों कर रहे हैं ? **(विविधा फीचर्स)**

विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

मातृत्व अधिकारः महिलाओं के साथ भेदभाव और धोखा

• आयशा •

भारत में मातृत्व अधिकार से संबंधित कानूनी हक अपर्याप्त रहे हैं। यहां इस बात पर ध्यान देना जरूरी होगा कि मातृत्व अधिकार कानून 1961 केवल उन महिलाओं पर लागू होता है जो संगठित क्षेत्र में काम करती हैं तथा जिनकी संख्या देश की जनसंख्या में से 10 प्रतिशत से भी कम है। मातृत्व अधिकार अधिनियम संशोधन जिसके अंतर्गत प्रसूति अवकाश 14 सप्ताह से बढ़ाकर 26 सप्ताह तक कर दिया, अगस्त 2016 में राज्य सभा में पारित हो चुका है। कानून में संशोधन ही वह अवसर है, जिसके द्वारा उन सैकड़ों महिलाओं (असंगठित क्षेत्र में कार्यरत) को शामिल किया जा सकता है। परंतु मौजूदा मातृत्व अधिकार अधिनियम में संशोधन के बाद भी असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं को शामिल न करके उनके साथ बड़े पैमाने पर होने वाले भेदभाव की अनदेखी की जा रही है।

भारत में लगभग 90 प्रतिशत महिलाएं मातृत्व अधिकारों से वंचित रही हैं और क्योंकि वह मातृत्व अधिकार अधिनियम के तहत नहीं आती, तो प्रसूति के दौरान तथा बाद में भी उन्हें किसी प्रकार की आर्थिक सहायता व अवकाश नहीं मिलता हैं, जिससे मां और शिशु दोनों की सेहत को खतरा होता है। जबकि यह मान्यता है कि गर्भावस्था, प्रसव और स्तनपान महिलाओं के शरीर पर अतिरिक्त बोझ डालता है जिसके लिए महिलाओं को उनके नियमित कामों से दूर रह कर पर्याप्त आराम तथा विशेष पोषण की आवश्यकता होती है। महिलाओं को गर्भावस्था और प्रसव के तत्काल बाद की अवधि के अंतिम तिमाही के दौरान कठिन परिश्रम से बचने की आवश्यकता होती है। छह माह तक केवल स्तनपान कई कारणों से बच्चे के सर्वोत्तम हित में है जबकि अध्ययन बताते हैं कि लगभग मात्र 40 प्रतिशत बच्चे छह माह तक केवल स्तनपान नहीं करते बल्कि साथ – साथ ऊपरी आहार भी बच्चों को दिया जाता है, क्योंकि महिला को मातृत्व अधिकार के अभाव में प्रसव के बाद काम छूट जाने के डर से जल्दी से जल्दी काम पर लौटना पड़ता है, जिस कारण बच्चे को केवल मां का दूध नहीं मिल पाता और बच्चे की देख रेख करने वाले उसे ऊपरी आहार देने लगते हैं जिसके नतीजे भयानक कुपोषण के रूप में हम सबके सामने हैं।

महिलाओं को लगभग कुल 9 महीनों का अवकाश पूरे भुगतान सहित मातृत्व अधिकार के रूप में दिया जाना चाहिए जिससे वह प्रसव पूर्व आराम तथा प्रसव के बाद विशेष रूप से शिशु को स्तनपान करा सके। मातृत्व अधिकारों के साथ–साथ हर महिला को अच्छी गुणवत्तापूर्ण सुविधाएं जैसे जांच तथा स्वास्थ्य सेवाएं भी उपलब्ध होनी चाहिएं। यदि हर महिला को मातृत्व अधिकार के रूप में अवकाश और जांच तथा स्वास्थ्य सेवाएं मिलती हैं तो यकिनन मां और बच्चे दोनों ही स्वस्थ रहेंगे और स्वस्थ बच्चा न केवल परिवार का और समाज का बल्कि देश का भी सुखद और चमकता हुआ भविष्य है।

मातृत्व अधिकार को स्त्रियों की पहचान से जोड़नाः भारत में महिलाएं अपने घर के सभी काम (प्रबंधन इत्यादि) करती हैं लेकिन उस काम को कार्यशील नहीं माना जाता है जबकि स्थिति यह है कि वे 8 से 16 घंटे श्रम करती हैं लेकिन अफसोस न ही तो इस श्रम को आज तक कोई पहचान मिली है और क्योंकि इस श्रम का कोई आर्थिक मूल्य नहीं चुकाया जाता इसलिए भारतीय अर्थव्यवस्था के योगदान में भी यह नहीं जुड़ता है। बेहतर होगा कि सरकार पारंपरिक लैंगिक असंवेदनशीलता से बाहर आए और श्रम को पुनर्परिभाषित करने, पुनर्वितरण और उसके मूल्यांकन की व्यवस्था बनाए।

गर्भवती महिलाओं की उपेक्षाः असंगठित क्षेत्र में काम कर रहीं महिलाओं को गर्भ धारण होने पर विभिन्न असहनीय परिस्थितियों से जूझना पड़ता है। या तो उन्हें नौकरी से निकाल दिया जाता हैं या फिर उनके लिए इस तरह के हालात पैदा कर दिए जाते हैं जिससे उन्हें स्वयं ही नौकरी छोड़नी पड़ती है। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन के 131 देशों पर हुए एक अध्ययन के अनुसार महिलाओं के नौकरी छोड़ देने के मामले में भारत 131 में से नीचे से 111 नंबर पर है। इससे ज्ञात होता है कि महिलाओं का नौकरी छोड़ देना भारत में एक आम बात है। मौजूदा सरकार को इस विषय में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। आय में कमी और काम में हो रहे भेदभाव के खिलाफ महिलाओं की रक्षा के रूप में मातृत्व अधिकार बहुत ही आवश्यक हैं।

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून और प्रधानमंत्री की बयानबाज़ीः 31 दिसंबर 2016 को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के द्वारा मन की बात में कहा गया कि गर्भवती महिलाओं के लिए एक योजना शुरू की जा रही है जिसके तहत गर्भवती महिलाओं को पंजीकरण, प्रसव, टीकाकरण एवं पौष्टिक आहार के लिए 6000 रुपए की आर्थिक मदद मिलेगी लेकिन वहीं दूसरी ओर मातृत्व

जारी

अधिकार के लिए अपर्याप्त बजट की बात कहते हुए महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने केवल एक ही बच्चे के जन्म के लिए यह सीमा तय कर दी है। जबकि एक सच्चाई यह भी है कि राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून 2013 (एनएफएसए सेक्शन 4 बी) के तहत सभी गर्भवती महिलाओं के लिए 6000 रुपए आर्थिक मदद का प्रावधान है, जो कि 2013 में ही पास हो गया था। कानून का 365 दिनों के अंदर क्रियांवयन होना चाहिए लेकिन राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के पास होने के तीन साल से भी अधिक होने के बावजूद भी केंद्र सरकार ने सभी के लिए इस योजना को क्रियांवित नहीं किया है।

बेहद अफसोस की बात है कि महिलाओं के लिए इतनी शर्तें तो कायम कर दी हैं लेकिन क्या कभी किसी भारतीय सरकार ने इस ओर ध्यान दिया है कि भारत में महिलाओं की परिवार नियोजन में क्या भूमिका है? बाल विवाह की शिकार बच्चियां 19 वर्ष से कम उम्र में ही बच्चों को जन्म किसकी मर्ज़ी से देती हैं? बलात्कार की शिकार बच्चियों को भी स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण बच्चे को जन्म देना पड़ता है, मृत शिशु के जन्म की स्थिति में मातृत्व अधिकार का कोई प्रावधान नहीं है, तो क्या ये सभी मातृत्व अधिकार से वंचित रहें?

बजट: वित्त मंत्री द्वारा 1 फरवरी को पेश किए गए बजट 2017 – 18 में केवल 2700 करोड़ रुपए मातृत्व अधिकार के लिए आवंटित किए गए हैं, जो कि सभी के लिए मातृत्व अधिकार के लिए आवश्यक बजट का केवल 30 प्रतिशत ही है। वास्तव में आवंटित बजट सभी शर्तों को पूरा करने वाली महिलाओं के लिए भी पर्याप्त नहीं हैं। बहुत सारे अध्ययन तथा आंकड़ों के विश्लेषण से पता चलता है कि वह महिलाएं जो गरीब हैं, दलित आदिवासी समुदायों तथा जो देश के दूर दराज क्षेत्रों में रहती हैं उन्हें मातृत्व लाभ की अधिक आवश्यकता है और वही इन अधिकारों से वंचित रह जाएंगी। आज देश में महिलाओं के साथ हर कदम पर हो रहे भेदभाव के लिए जिन नीतियों की ज़रूरत है, सरकार का बजट आवंटन बिल्कुल उसके पक्ष से बहुत दूर दिख रहा है।

अस्पतालों तथा स्वास्थ्य केंद्रों की दशा: किसी भी तरह की शर्त को लागू करने से पहले हमारे समाज में उपलब्ध अस्पताल तथा चिकित्सा केंद्रों की स्थिति का जायज़ा ज़रूर हमारी सरकार को करना चाहिए। जैसा कि कहा गया है कि मातृत्व लाभ केवल संस्थागत प्रसव के द्वारा ही मिलेगा, हमारी सरकार को यह देखना चाहिए कि आज भी देश में हज़ारों ऐसे गांव हैं जहां लोग आसानी से अस्पतालों तक नहीं पहुंच पाते हैं और यदि वहां तक पहुंच भी जाते हैं तो जो सुविधाएं उन्हें मिलनी चाहिएं वो उन्हें नहीं मिलती हैं। उदाहरण के लिए: अक्सर स्वास्थ्य केंद्रों तथा अस्पतालों में प्रसव की पूर्ण व्यवस्था नहीं है, दवाएं नहीं हैं, साफ–सफाई पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है तथा गर्भवती महिलाओं के साथ बहुत ही दुर्व्यवहार किया जाता है। शौचालय साफ़ नहीं होते, वाश बेसिन नहीं होते, पीने के लिए स्वच्छ पानी का अभाव तथा मल–मूत्र निपटान प्रणाली का भी अभाव रहता है जिससे नवजात शिशु के इतनी गंदगी में रहने पर संक्रमण होने की संभावनाएं और अधिक हो जाती हैं।

मातृत्व अधिकार महिलाओं के अधिकार हैं, जो सभी महिलाओं को बिना किसी शर्त के मिलने ही चाहिए। यह मां और शिशु के स्वस्थ जीवन के साथ – साथ राज्य के विकास के लक्ष्य को हासिल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। लेकिन मातृत्व अधिकार नाम का फूल यदि केवल संगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं को ही दिया जाएगा तो असंगठित क्षेत्रों में काम करने वाली बाक़ी 90 प्रतिशत से भी अधिक महिलाएं मातृत्व अधिकार नामक इस फूल की केवल खुशबू ही महसूस कर सकेंगी।

(लेखिका रोजी रोटी अधिकार अभियान से जुड़ी हैं) **(विविधा फीचर्स)**

विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

जनसंख्या वृद्धि का सांप्रदायिकीकरण

• राम पुनियानी •

सांप्रदायिक ताकतों द्वारा धर्मपरिवर्तन व जनसंख्या वृद्धि के संबंध में पूर्वाग्रहों और गलत धारणाओं का लंबे समय से समाज को बांटने के लिए प्रयोग किया जा रहा है। इसी कड़ी में केंद्रीय गृह राज्यमंत्री किरण रिजुजू ने एक ट्वीट कर कहा कि भारत में हिंदू आबादी घट रही है क्योंकि हिंदू धर्मपरिवर्तन नहीं करवाते और यह भी कि पड़ोसी देशों के विपरीत, भारत में अल्पसंख्यक समृद्ध और खुशहाल हैं।

लंबे समय से यह प्रचार किया जा रहा है कि देश की हिंदू आबादी कम हो रही है और मुसलमानों की आबादी में बढ़ोत्तरी हो रही है। सन 2011 की जनगणना के अनुसार, भारत में हिंदू, कुल आबादी का 79.8 प्रतिशत हैं जबकि मुसलमान, आबादी का 14.23 प्रतिशत हैं। जनगणना 2011 के धार्मिक समुदायवार आंकड़ों से पता चलता है कि 2001 से 2011 के बीच जहां देश की हिंदू आबादी में 16.76 प्रतिशत की वृद्धि हुई वहीं मुसलमानों के मामले में यह आंकड़ा 24.6 प्रतिशत था। इसके पिछले दशक में हिंदुओं और मुसलमानों, दोनों की आबादी में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि हुई थी। 2001–2011 की अवधि में हिंदुओं की आबादी 19.92 प्रतिशत बढ़ी जबकि मुसलमानों की आबादी में 29.52 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जनसांख्यकीय विशेषज्ञ कहते हैं कि दोनों समुदायों की जनसंख्या वृद्धि दर घट रही है और इन दरों के बीच का अंतर कम हो रहा है।

स्पष्टतः हमें यह ध्यान में रखना होगा कि आने वाले समय में मुस्लिम आबादी में वृद्धि की दर घटेगी और हिंदू आबादी में वृद्धि दर के लगभग बराबर हो जाएगी परंतु भविष्य में कभी भी मुसलमानों की आबादी, हिंदुओं से अधिक होने की संभावना नहीं है। सन 2001 से लेकर 2011 के बीच हिंदुओं की आबादी में 13.3 करोड़ की वृद्धि हुई, जो कि सन 2001 में मुसलमानों की कुल आबादी के लगभग बराबर थी। यह साफ है कि मुसलमानों की आबादी के हिंदुओं से अधिक हो जाने के खतरे के संबंध में जो दुष्प्रचार किया जा रहा है, उसमें कोई दम नहीं है।

जनसांख्यकीय विशेषज्ञ कहते हैं कि अधिक प्रजनन दर, अक्सर शिक्षा के अभाव और स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी का नतीजा होती है। केरल के मुसलमानों की प्रजनन दर, उत्तर भारत के हिंदू समुदायों से कहीं कम है और यहां तक कि केरल की कई हिंदू जातियों से भी कम है। केरल के मुसलमानों की आर्थिक स्थिति, असम, पश्चिम बंगाल, उत्तरप्रदेश व महाराष्ट्र आदि के मुसलमानों से कहीं बेहतर है। यह तथ्य कि उच्च प्रजनन दर का संबंध शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं आदि से होता है, इससे भी स्पष्ट है कि दलितों (अनुसूचित जातियों) और आदिवासियों (अनुसूचित जनजातियों) की जनसंख्या वृद्धि दर भी अन्य समुदायों से अधिक है। सन 2011 की जनगणना के अनुसार, अनुसूचित जनजातियां, कुल आबादी का 8.6 प्रतिशत थीं। यह आंकड़ा सन 1951 में 6.23 प्रतिशत था। इसी तरह सन 1951 में अनुसूचित जातियों का आबादी में प्रतिशत 15 था जो कि सन 2011 में बढ़कर 16.6 प्रतिशत हो गया। अतः यह स्पष्ट है कि सांप्रदायिक तत्व जो दुष्प्रचार कर रहे हैं, उसमें तनिक भी सत्यता नहीं है और उसका यथार्थ से कोई लेना देना नहीं है। यहां यह भी महत्वपूर्ण है कि प्रवीण तोगड़िया जैसे कुछ लोग यह मांग कर रहे हैं कि देश में दो से अधिक बच्चे पैदा करने पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए वहीं साक्षी महाराज और साध्वी प्राची जैसे कुछ नेता हिंदुओं से यह अपील कर रहे हैं कि वे ज्यादा से ज्यादा बच्चे पैदा करें!

भाजपा अध्यक्ष ने लोगों से यह अपील की है कि वे ईसाइयों की बढ़ती आबादी के खतरे को समझने के लिए उत्तर पूर्व की ओर देखें। उत्तर पूर्व, मुख्यतः आदिवासी इलाका है और यहां सन 1931 से 1951 के बीच ईसाई आबादी के प्रतिशत में वृद्धि हुई थी। इसका कारण था शिक्षा का प्रसार। अगर हम राष्ट्रीय स्तर पर देखें तो हमें पता चलेगा कि देश में ईसाइयों का कुल आबादी में प्रतिशत पिछले कुछ दशकों से लगभग स्थिर बना हुआ है, बल्कि उसमें कमी आई है। सन 1971 में ईसाई, देश की आबादी का 2.60 प्रतिशत थे। यह आंकड़ा 1981 में 2.44, 1991 में 2.34, 2001 में 2.30 और 2011 में भी 2.30 था। इस तथ्य के बावजूद यह दुष्प्रचार जारी है कि ईसाई मिशनरियां, आदिवासी क्षेत्रों में जमकर धर्म परिवर्तन करवा रही हैं। सन 1991 में आरएसएस से जुड़े बजरंग दल के दारा सिंह द्वारा ईसाई मिशनरी ग्राहम स्टीवर्ट्स स्टेंस को उसके दो नन्हें लड़कों के साथ जिंदा जला दिए जाने के बाद से देश में ईसाई विरोधी हिंसा की शुरुआत हुई। वाधवा आयोग, जिसने पास्टर स्टेंस की हत्या की जांच की, इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि वे धर्मपरिवर्तन नहीं करवा रहे थे और यह भी कि क्योनझार व मनोहरपुर इलाकों में, जहां वे काम कर रहे थे, ईसाइयों की आबादी के प्रतिशत में कोई वृद्धि नहीं हुई थी। ओडिसा के कंधमाल में स्वामी लक्ष्मणानंद

जारी

की हत्या के बहाने ईसाई विरोधी हिंसा भड़काई गई। गुजरात में भी धर्मपरिवर्तन के मुद्दे पर ईसाइयों के खिलाफ हिंसा हुई। इसके साथ ही, ये आंकड़े भी हमारे सामने हैं कि ईसाइयों का कुल आबादी में प्रतिशत वही बना हुआ है। तो फिर आखिर धर्मपरिवर्तित ईसाई कहां छुपे हुए हैं। कुछ लोगों का कहना है कि धर्मपरिवर्तित ईसाई, अपने धर्म को उजागर नहीं करते और इसलिए ईसाई आबादी के संबंध में सही आंकड़े सामने नहीं आ पाते। यह केवल एक आरोप है जिसका कोई तार्किक आधार नहीं है। और अगर हम यह मान भी लें कि ऐसा हो रहा है, तो भी यह बड़े पैमाने पर नहीं हो रहा होगा।

धर्मपरिवर्तन हमेशा से हिंदू राष्ट्रवादियों के एजेंडे पर रहा है। आजादी के आंदोलन के दौरान धर्मपरिवर्तन करवाने की दो अलग–अलग मुहिम चल रही थीं। पहली थी तंजीम जो लोगों को मुसलमान बनाना चाहती थी और दूसरी थी शुद्धि जो 'विदेशी' धर्मों के अनुयायी बन गए हिंदुओं को फिर से अपने घर वापस लाना चाहती थी। यह कहा जाता था कि धर्मपरिवर्तन कर लेने से वे लोग 'अशुद्ध' हो गए हैं और इसलिए उन्हें 'शुद्धि' की प्रक्रिया से गुजार कर हिंदू बनाना जरूरी है। पिछले कई दशकों से आरएसएस, विहिप व वनवासी कल्याण आश्रम, घर वापसी अभियान चला रहे हैं जिसका उद्देश्य उन दलितों और आदिवासियों को फिर से हिंदू धर्म के झंडे तले लाना है जो बल प्रयोग के कारण मुसलमान और लोभ लालच में फंसकर ईसाई बन गए हैं। यह घर वापसी अभियान आदिवासी व ग्रामीण इलाकों और शहरों की मलिन बस्तियों में चलाया जा रहा है।

आदिवासी, मूलतः, प्रकृति पूजक होते हैं। आरएसएस का कहना है कि वे हिंदू हैं। उन्हें हिंदू बनाने के लिए वनवासी कल्याण आश्रम ने उत्तर पूर्व में स्कूलों और होस्टलों का एक जाल बिछा दिया है। यह साफ है कि इन सारे कार्यक्रमों का उद्देश्य राजनीतिक है और समाज की भलाई की बात केवल असली इरादों को ढंकने के लिए कही जा रही है। दरअसल, संघ परिवार धर्म को राष्ट्रवाद से जोड़ना चाहता है। *(मूल अंग्रेजी से हिंदी रूपांतरण अमरीश हरदेनिया)* **(विविधा फीचर्स)**

विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

स्त्री, सेहत और शौचालय

• नसीरुद्दीन •

इसे स्वच्छता का प्रचार मान कर न पढ़ें, वरना नाउम्मीदी हाथ लगेगी! सवाल नजरिए का है। यही वजह है कि खबर की दुनिया में मौलानाओं का समुदाय गलत वजहों से सुर्खियों में ज्यादा जगह पाता है। जब वे कोई समाजी बदलाव की बात करते हैं, तो आम तौर पर उसे कम तवज्जो मिलती है। ऐसी ही एक खबर पिछले दिनों आई और गुम हो गई।

हरियाणा के नूह इलाके में 12 सौ इमामों ने फैसला किया कि अगर किसी लड़के वाले के घर में शौचालय नहीं होगा, तो वे उसका निकाह नहीं पढ़ाएंगे। इसी तरह का फैसला हरियाणा, पंजाब और हिमाचल में जमियतुल उलमा से जुड़े इमामों ने भी लिया है। इस फैसले को कई नजर से देखा जा सकता है। खालिस राजनीतिक नजर से। आर्थिक नजर से। समाजी नजरिए से। आम तौर पर हम सब मर्द की नजर से ही चीजों को देखते और तौलते हैं। इसलिए एक नजर स्त्रियों की भी है। घर में शौचालय या गुस्लखाने की जगह होने न होने से मर्दों को बहुत फर्क नहीं पड़ता है। घर में पानी का इंतजाम भी उनका सिर दर्द नहीं है। ये मर्दों की रोज की जिंदगी से जुड़े मसले नहीं हैं। इसलिए उन्हें इनसे होनी वाली तकलीफ का अंदाजा शायद नहीं हैं। अगर कुछ को है, तो वह उनका रोज का भोगा सच नहीं है। इसकी झलक इस मुद्दे पर आने वाले विज्ञापनों में देखा जा सकता है। इसीलिए शौचालय और पानी का होना स्त्री जाति की सेहत का अहम हिस्सा है। बिना इसके वे सशक्त होना तो दूर की बात है, बीमार और कमजोर हो जाती हैं। फर्ज कीजिए, हम सब स्त्री हैं। हमारे घर में शौचालय भी नहीं है। पानी का घर के अंदर इंतजाम भी नहीं है। अब अपने पेशाब या शौच जाने और साफ–सफाई के बारे में सोचें। क्या बतौर स्त्री हम जब चाहें, जहां चाहें अपनी इस कुदरती जरूरत को खारिज कर सकते हैं? इस जवाब में ही स्त्री होने की पीड़ा और बीमारियों की जड़ छिपी हुई है।

स्त्री के लिए इस कर्म के लिए आम तौर पर समय तय है। पौ फटने से पहले या सूरज डूबने के बाद– यानी अंधेरा ही उसकी जिंदगी के इस कर्म का सच है। इस अंधेरे का इंतजार शर्म और जिल्लत से बचने का है, जो समाज ने उसके हिस्से तय कर दिया है। यही अंधेरा, उसे हमेशा हिंसक मर्दों के आतंक में भी रखता है। खैर यह तो हुई एक बात। इससे बड़ी बात है कि इन दो अंधेरों के दरम्यान दिन के उजाले में अगर किसी को जरूरत आ पड़ी, तो वह क्या करेगी–करती होगी। इसलिए कई महिलाएं कम खाना खाती हैं और कम पानी पीती हैं। वे पहले से ही कमजोर होती हैं और इस वजह से अपने को और कमजोर रखने पर मजबूर होती हैं। यही नहीं, स्त्री के जिस्म की बनावट खासतौर पर साफ–सफाई की मांग करता है। खुले में शौच और साफ पानी का न मिलना, उन्हें कई तरह के रोग दे सकता है। जैसे– पेशाब का संक्रमण, पेट में कीड़ा होना, कब्जीयत, आंत की बीमारी, चिड़चिड़ापन, पानी की कमी, खून की कमी, कीडनी में समस्या, कमर दर्द, चक्कर आना वगैरह। महिलाओं की जिंदगी का बड़ा हिस्सा एक कुदरती प्रक्रिया के साथ हर महीने गुजरता है। इसे हम–आप माहवारी या महीना के नाम से जानते हैं। हर महीने के ये चंद दिन खास तौर पर साफ–सफाई की मांग करते हैं। एक ऐसी जगह की मांग करते हैं, जिसका इस्तेमाल जरूरत पड़ने पर स्त्री दिन में कई बार कर सके। अब अगर उसकी पहुंच में हर वक्त ऐसी जगह नहीं है, तो हम उसकी जिंदगी का अंदाजा लगाए। घरों में वह किसी तरह कोने में अपने को समेटे रहती है। इस वजह से लड़कियों के स्कूल छूटते हैं, क्योंकि वहां सुरक्षित और साफ जगह नहीं है। महिलाएं काम पर नहीं जा पाती हैं, क्योंकि काम की जगह और बाजारों को हमने महिलाओं की नजर से न देखा और न ही सोचा।

अब किसी गर्भवती या जच्चा–बच्चा के बारे सोचिए। बीमार या बुजुर्ग महिला को ध्यान कीजिए। किसी नई–नवेली दुल्हन की पीड़ा का अंदाजा लगाइए। घर में पानी या शौचालय न होने की वजह से उसे हम किस दयनीय हालत में पहुंचा देते हैं। क्या यह हालत उन्हें बीमारी नहीं देगी? अध्ययन बताते हैं कि संक्रमण से बचाव, मां के साथ नवजात की जिंदगी के लिए भी जरूरी है। नवजात में बीमारियों और मौतों की बड़ी वजह गंदगी या पानी का संक्रमण है, जो मां और बच्चे दोनों को बाहर से ज्यादा मिलता है। ऐसे माहौल में रहने वाली महिलाएं लगातार मानसिक तनाव में भी जीती हैं। सुरक्षित जगह की तलाश इनका रोज का तनाव है. हिंसा की खौफ का साया भी रोज का ही है। हम मर्दों की तुलना में सोचें, तो सिर्फ इन कुदरती जरूरतों को पूरा करने के लिए औरत का रोजाना कितना वक्त बरबाद होता है। घर में शौच की जगह का होना सिर्फ शौचालय बनाने का नाम नहीं है। यह स्त्री को सेहतमंद रखने का जरिया है। सेहतमंद होने का अर्थ निरोग और बेखौफ रहना है। यह स्त्री के संसाधन

जारी

पर नियंत्रण का मुद्दा है। इसलिए यह स्त्री का बड़ा मुद्दा है। वैसे, शौचालय होना न होना संसाधनों से भी जुड़ा है। इसलिए यह महज व्यक्तिगत साफ–सफाई का सवाल नहीं है। दो जून की रोटी की जद्दोजेहद करने वालों की पहली जरूरत शौचालय हो, यह मुश्किल है। इसलिए राज्य या देश को सेहतमंद रहना है, तो एक सामाजिक जिम्मेवारी मान कर इसे पूरा करना चाहिए। सिर्फ लोगों पर छोड़ना सरकार का खुद की जिम्मेवारी से मुंह मोड़ना है। क्योंकि अगर यह शर्म या जिल्लत की बात है, तो स्त्री के लिए तो कतई नहीं है। और हमने कितनी चीजें स्त्री के हाथ में दी हैं, जो इस कर्म का शर्म उसके सिर जाना चाहिए। यह तो सामाजिक शर्म है।

तीन राज्यों के मौलानाओं ने जो फैसला किया है, इसके असर दिखने चाहिए। इससे शौचालय और पानी का इंतजाम घरों के अंदर हर वक्त महिलाओं की पहुंच में होगा। लेकिन, ऐसा न हो कि यह महिलाओं को घर के अंदर बंद करने का जरिया बना लिया जाए। वे जब बाहर निकलती हैं, तो झुंड में निकलती हैं। दुख–दर्द साझा करती हैं। खुली हवा में सांस लेती हैं। इसलिए, शौचालय के जरिए जिल्लत और खौफ का साया खत्म होना चाहिए। उनके लिए खुली हवा का दायरा बंद नहीं होना चाहिए। स्त्रियों को सेहतमंद रहने के लिए खिली धूप और खुली हवा भी चाहिए। **(विविधा फीचर्स)**

विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

राजस्थानी का कोई धणी धोरी नहीं है

• वेदव्यास •

राजस्थानी भाषा को संविधान की आठवीं सूची में देश की अन्य 22 भाषाओं की तरह सम्मान और मान्यता देने का प्रश्न पिछले 70 साल से अटका हुआ है। कोई आठ करोड़ राजस्थानियों के इस एक सपने और इच्छा को लेकर जयनारायण व्यास, हीरालाल शास्त्री, ठाकुर रामसिंह, नरोत्तम दास स्वामी, डॉक्टर करणी सिंह, पन्नालाल बारूपाल, रावत सारस्वत, किशोर कल्पनाकांत, कुवर चंद्र सिंह बादली, कन्हैया लाल सेठिया, विजय दान देथा, कोमल कोठारी, मरूधर मृदुल, लक्ष्मी कुमारी चूंडावत, सत्य प्रकाश जोशी, सीताराम लालस जैसे सैकड़ों नामचीन साहित्यकार और जन नेता भारत सरकार से गुहार लगाते–लगाते दिवंगत हो चुके हैं। मैं खुद भी पिछले कोई 50 साल से राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति के दो हजार साल की गौरवगाथा की प्रभातफेरी का भागीदार हूं तथा मैंने राजस्थान की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, एवं राजनीतिक के चक्रव्यूह में भाषा, साहित्य एवं संस्कृति तथा कला–संगीत तथा पुरातत्व को लेकर चारों तरफ निराशा, उपेक्षा और अनाथ होने की मानसिकता फैली हुई है। कहीं कोई वाद, विवाद और संवाद जैसा भी नहीं है तथा सब चुप हैं।

कोई माने अथवा नहीं माने लेकिन आंखों देखी सच्चाई यह है कि राजस्थान (1949) निर्माण के बाद प्रदेश में राजस्थानी भाषा–साहित्य और संस्कृति का संरक्षण, प्रोत्साहन और आदरभाव केवल शिवचरण माथुर, पूनमचंद विश्नोई, अशोक गहलोत, चंदनमल बैद, दीपेंद्र सिंह शेखावत, लक्ष्मी कुमारी चूंडावत, निरंजन नाथ आचार्य तथा बलराम जाखड़ और रामनिवास मिर्धा जैसों ने मुखर रूप से दिखाया है। इन राजनेताओं ने आगे आकर राज्य सरकार के द्वारा राजस्थानी भाषा साहित्य एवं संस्कृति अकादमी, बीकानेर (1983) की स्थापना की। आकाशवाणी जयपुर से 1973 में राजस्थानी समाचार प्रसारण शुरू करवाया। राजस्थान विश्वविद्यालय (जयपुर) सुखाड़िया विश्वविद्यालय (उदयपुर) स्नातकोतर राजस्थानी में पाठ्यक्रम बनवाया। राज्य लोक सेवा आयोग की नौकरी भर्ती में राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति के ज्ञान को लेकर अनिवार्य परीक्षा प्रणाली से जोड़ा। केंद्रीय साहित्य अकादमी से साहित्यक भाषा की मान्यता दिलवाई, माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की परीक्षाओं से जोड़ा तथा राजस्थान रत्न जैसा सम्मान–गौरव भी स्थापित किया। यहां तक कि संविधान की मान्यता के अनुरूप अशोक गहलोत सरकार ने विधानसभा ने प्रस्ताव (2003) भी पारित करके केंद्र सरकार को भिजवा दिया लेकिन केंद्र भी मौन है। राजस्थानी भाषा, साहित्य एवं कला–संगीत, पुरातत्व अभिलेखागार, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, कथक केंद्र, जवाहर कला केंद्र, रवींद्र मंच, संगीत नाटक एवं ललित कला अकादमी जैसे कोई 22 सांस्कृतिक प्रतिष्ठान एक स्वतंत्र कला संस्कृति मंत्रालय के मंत्री के अंतर्गत मोहन लाल सुखाड़िया से लेकर माथुर–गहलोत सरकारों ने ही बनाए हैं लेकिन प्रश्न यह है कि कांग्रेस के विपरीत कोई बताए कि भाजपा सरकारों ने राजस्थानी भाषा की मान्यता, संरक्षण और विकास के लिए कौनसा एक नया काम किया है? और तो और राजस्थानी अकादमी और अन्य सभी हिंदी, उर्दू, बृज, सिंधी और पंजाबी अकादमियां तथा संस्कृति संस्थान आज पिछले तीन साल से बंद पड़े हैं। लेकिन वर्तमान में गढ़, महल, हवेलियों की धरोहर को और जातीय वंशावलियों की विरासत पर सरकार अधिक सक्रिय है। सरकार में अब राजस्थानी भाषा, साहित्य और संस्कृति का नामलेवा ही नहीं है। इस परिदृश्य में राजस्थानी भाषा, साहित्य और संस्कृति एवं कला संगीत की औकात आप जयपुर लिट्रेचर फेस्टवल, बिड़ला जी के बिहारी पुरस्कार तथा जयपुर के जवाहर कला केंद्र और रवींद्र मंच को देखकर समझ सकते हैं। राजस्थान में सभी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति संस्थानों का सहयात्री और संयोजक रहकर, अपने जीवन अनुभव से आज मैं यह बात विनम्रता से कहना चाहता हूं कि सरकार ने अब राजस्थानी को एक मनोरंजन और पर्यटन के सुपर बाजार में बदल दिया है तो राजस्थान की आम जनता को भाषा–संस्कृति के महत्व और आत्म गौरव से वंचित कर दिया है। राजस्थानी भाषा साहित्य की नाव 21वीं शताब्दी के भूमंडलीकरण की राजनीति के भंवर में फंसी हुई है क्योंकि अब यहां कोई मीरां बाई, महाराणा प्रताप, भामशाह और सूर्यमल मीसण के साथ पाबू, हड़बू, रामदेव, गोगाजी और तेजाजी जैसे पांच पीर भी शेष नहीं बचे हैं।

इस तरह आज राजस्थान में भाषा, साहित्य, संस्कृति, कला, संगीत, पुरातत्व और सांस्कृतिक गौरव का 'पराभाव पर्व', चल रहा है। राजस्थानी को लेकर जनता जनार्दन में कोई प्रभातफेरी और पुर्नजागरण करने वाली मुहिम नहीं है तथा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की नई राजनीति अब हिंदी के लिए, राजस्थानी को लगातार पीछे धकेल रही है। बचपन से लेकर जवानी तक के सभी सपने अब अंग्रेजी, संस्कृत और हिंदी भाषा के पाठ्यक्रम बन गए हैं ताकि न तो नौ मन तेल होगा और न राधा नाचेगी। राजस्थानी

जारी

अब केवल कुछ सामंती और सेठ–साहूकारों के बाजार और कुछ लखटकिया पुरस्कारों की मोहताज रह गई है जिसे हर कोई मंत्री और संतरी अब आश्वासन तथा आशीर्वाद बांट रहे हैं ताकि ये भ्रम बना रहे कि अच्छे दिन आने वाले हैं। वस्तुस्थिति अब ये है कि कुछ जुनून वाले युवा पीढ़ी के साथी लोग (भरत ओला, गौतम अरोड़ा, रामस्वरूप किसान, नागराज शर्मा, पदम मेहता, श्याम महर्षि, दुलाराम सहारण आदि) अपनी–अपनी पत्र–पत्रिकाओं के खून–पसीने से राजस्थानी को सींच रहे हैं लेकिन इनकी कोई आवाज अलख से खलक तक नहीं पहुंच रही है। *(लेखक राजस्थान साहित्य अकादमी के अध्यक्ष रह चुके हैं)*

(विविधा फीचर्स)

विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

सरकारी योजना की बाट जोहते हार गए पालनहार

• दिलीप सिंह बीदावत •

बाड़मेर जिले में राज्य सरकार के सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग द्वारा निराश्रित व अनाथ बच्चों के लिए चलाई जाने वाली पालनहार योजना स्वयं ही निराश्रित और अनाथ हो गई है। गत दो वर्षों से लाभांवितों को लाभ नहीं मिल रहा है। योजना के लाभ का भुगतान द्विमासिक तौर पर किए जाने के विभागीय आदेश विभाग की फाइलों में धूल फांक रहे हैं। लाभांवित ग्राम पंचायत से लेकर जिला स्तर तक चक्कर लगा रहे हैं लेकिन जिम्मेदार लोग संतोषजनक जवाब नहीं दे पा रहे हैं। कभी बजट नहीं होने तथा कभी लाभांवितों के डाटा ऑनलाइन की प्रक्रिया का हवाला देकर लाभार्वितों को जल्दी भुगतान का भरोसा देते दो साल गुजर गए। यह योजना ऐसे बच्चों के लिए चलाई जा रही है जिनके सिर पर माता – पिता या पिता का साय उठ गया है। ऐसे बच्चों का पालन–पोषण करने वाले परिवार को पालनहार का नाम दिया गया है। निराश्रित बच्चों का पारिवारिक वातावरण में पालन–पोषण का जिम्मा लेने वाले परिवार को पालनहार योजना के तहत 06 साल से छोटे बच्चों को 500 रुपए प्रति माह तथा 6 से 18 वर्ष तक के बच्चे को 1000 प्रतिमाह एवं साल में एक बार एक मुश्त 2000 रुपए की सहायता उनकी शिक्षा और अन्य जरूरतों के लिए दिए जाने का प्रावधान इस योजना के तहत किया गया है लेकिन योजना के क्रियांवयन से जुड़े कई ऐसे मुद्दे हैं, जिनके चलते सरकार की यह इस महत्वपूर्ण योजना का लाभ जरूरतमदों तक नहीं पहुंच रहा है।

योजना के क्रियांवयन की मुख्य जिम्मेदारी सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग की है या पंचायती राज संस्थाओं की, इसकी स्पष्टता नहीं है। ऑफलाइन आवेदन की प्रक्रिया के दौरान ग्राम पंचायत द्वारा योग्य लाभार्थियों के आवेदन पूर्ण कर पंचायत समिति विकास अधिकारी की स्वीकृति के साथ जिला सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग के मार्फत स्वीकृति हेतु निदेशालय जयपुर प्रेषित किया जाता था। पालनहार को चैक द्वारा राशि आने पर ही पता चलता था कि उसके आवेदन पर स्वीकृति हो चुकी। ऑफलाइन प्रक्रिया में होने वाली देरी से निजात दिलाने के लिए वर्ष 2014 के बाद ऑनलाइन आवेदन की प्रक्रिया प्रारंभ की गई। योग्य लाभार्थी ई–मित्र के माध्यम से ऑनलाइन आवेदन कर सकता है लेकिन ऑनलाइन प्रक्रिया से गत एक साल से किए गए सैकड़ों आवेदन स्वीकृति के इंतजार में पड़े हैं। लाभार्थी लाभ की बाट जो रहे हैं।

ऑनलाइन आवेदन में भी यह प्रावधान किया गया था कि आवेदक ऑनलाइन प्रक्रिया पूरी करने के बाद मूल दस्तावेज संबंधित पंचायत समिति के विकास अधिकारी को प्रस्तुत करेगा तथा विकास अधिकारी दस्तावेजों की जांच कर ऑनलाइन स्वीकृति जारी करेगा। लाभार्थी से जांच के लिए ऑनलाइन आवेदन के बाद मूल दस्तावेज जमा कराने की व्यवस्था ने लाभार्थियों की समस्याओं को और ज्यादा बढ़ा दिया। ऑनलाइन आवेदन के बाद मूल दस्तावेज विभाग में जमा कराने का औचित्य समझ से परे है। जीरो पेपर की उपयोगिता के स्थान पर दो पेपर अतिरिक्त जोड़ दिए गए। पंचायत समिति के विकास अधिकारी द्वारा ऑनलाइन स्वीकृति व्यवस्था में गत माह बदलाव कर नई व्यवस्था के तहत ऑनलाइन स्वीकृति जिला अधिकारी द्वारा किए जाने के निदेशालय के आदेश के बाद निगरानी और क्रियांवयन की व्यवस्था को और असमंजस में डाल दिया।

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग के बाल अधिकारिता विभाग का जिला स्तर पर कार्यालय एवं अलग से स्टाफ है लेकिन उपखंड व पंचायत समिति स्तर पर कार्मिक नहीं है, जो पालनहार के क्रियांवयन व मॉनिट्रिंग के कार्य को अंजाम दे सकें। पंचायत समिति स्तर पर किसी सेवा भावी कार्मिक को यह जिम्मा दे दिया जाता है लेकिन जवाबदेहीयुक्त जिम्मेदारी किसी के पास नहीं है। पंचायत समिति स्तर पर पालनहार योजना की जानकारी की भी कमी है। स्पष्ट व जवाबदेहीयुक्त जिम्मेदारी के अभाव में इस योजना का कोई धणी–धोरी नहीं है। पंचायत समिति के एक विकास अधिकारी से पालनहार योजना के क्रियांवयन की समस्याओं पर चर्चा करने पर उनका जवाब भी विचारणीय लगा। उनका कहना था कि पालनहार योजना का पूरा क्रियांवयन सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग करता है। हम केवल स्वीकृति जारी करते हैं। हमारे पास शिकायत आती है तो हम जिला कार्यालय को अवगत कराते हैं। हमें किसी प्रकार की जानकारी विभाग द्वारा उपलब्ध नहीं कराई जाती। सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग की पेंशन योजना की स्वीकृति से लेकर क्रियांवयन की पूरी जिम्मेदारी पंचायत समिति के पास होने से हर स्तर पर जिम्मेदारी की स्पष्टता है, तो पालनहार में क्यों नहीं हो सकती। भुगतान कोष कार्यालय के मार्फत किया जा सकता है।

जारी

तिहतरवें संविधान संशोधन के तहत 11 वीं अनुसूची में वर्णित जिन 29 विषयों को पंचायती राज संस्थाओं को हस्तांतरित करने का निर्णय 2003 में लिया गया था उसमें समाज कल्याण, वर्तमान में सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग के जिला अधिकारी द्वारा संचालित सभी गतिविधियां जिला परिषद को हस्तांतरित करते हुए विभाग के हर स्तर के अधिकारियों व कार्मिकों को पंचायती राज व्यवस्था के त्रीस्तरीय ढांचे के अधीन किया गया था। तिहत्रवें संविधान संशोधन की मंसा के अनुरूप 11 वीं अनुसूची में वर्णित 29 विषयों से संबंधित फंक्शंन, फंक्शनरी और फंड पंचायती राज संस्थाओं के अधीन करने का कार्य सिरे नहीं चढ़ने के कारण अनाथ व निराश्रित बच्चों के विकास के लिए चलाई गई सरकार की महत्वपूर्ण पालनहार योजना के क्रियांवयन, मॉनिट्रिंग और वार्षिक सत्यापन जैसे कार्यों को अंजाम तक पहुंचाने की जिम्मेदारी किसी की नहीं है।

बाड़मेर जिले में कुल 2275 पालनहार परिवारों के 3800 बच्चों को इस योजना के तहत लाभ दिया जाता था। सभी परिवारों के डाटा ऑनलाइन करने की प्रक्रिया प्रारंभ की गई तो विभाग के हाथ पांव फूल गए। विभाग के पास केवल 629 परिवारों का ही रिकॉर्ड मिल पाया। शेष परिवारों का रिकॉर्ड विभाग से गायब हो गया। यही कारण है कि गत वित्तीय वर्ष तक कुल पंजीकृत पालनहार परिवारों में 30 प्रतिशत तक ही यह लाभ पहुंच पाया है। शेष लाभार्थियों को पिछले दो सालों से लाभ नहीं मिल रहा है। यह दस्तावेज कैसे गायब हुए, कौन जिम्मेदार है, लापरवाही बरतने वाले जिम्मेदारों के खिलाफ कार्यवाही क्यों नहीं हो रही, इसका जवाब किसी के पास नहीं है। पालनहार ग्राम पंचायत व पंचायत समिति में अपनी फरियाद लेकर आते हैं, यहां उनको संतोषजनक जवाब नहीं मिलता है। जिले में कुल 17 पंचायत समितियों की 489 ग्राम पंचायतों के 2712 राजस्व गांवों और कस्बों में यह पालनहार छितरे हुए हैं जिनके क्रियांवयन, निगरानी, नियमित भुगतान और योग्य परिवारों की पहचान कर उनको लाभावित करने की जिम्मेदारी जिला सामाजिक न्याय एवं अधिकरिता विभाग के पास है। विभाग के पास पर्याप्त मानव संसाधन नहीं होने के कारण पंजीकृत पालनहारों के बच्चों को लाभ पहुंचाने में नाकाम है तथा पंचायती राज संस्थाओं को इसकी जिम्मेदारी नहीं दिए जाने के कारण समझ में नहीं आए हैं। निदेशालय बाल अधिकारिता विभाग द्वारा 16 मई 2013 को जारी आदेश में कहा गया था कि पालनहार को त्रैमासिक भुगतान की व्यवस्था काफी विलंब वाली है अतः पालनहार का भुगतान द्वैमासिक किया जाना सुनिश्चित करें लेकिन दो सालों से भुगतान नहीं मिलने पर भी निदेशालय से लेकर जिला स्तर तक किसी के ललाट पर सलवटें नहीं आना इस योजना के प्रति गंभीरता को दर्शाता है।

भाजपा सरकार ने सत्ता में आने से पूर्व जो वादे किए थे उनमें गुड गवर्नेंस की घोषणा भी थी। लेकिन पालनहार जैसी बालअधिकारों को सुरक्षा प्रदान करने वाली योजना में सुशासन जैसी व्यवस्था कोसों दूर है। विभाग द्वारा आवेदन की ऑनलाइन प्रक्रिया प्रारंभ करने के पीछे सोच यही थी कि लाभार्थी को अनावश्यक चक्कर नहीं लगाने पड़े तथा समय पर उसको लाभ मिल सके। बाड़मेर जिले में अप्रेल 2015 से जून 2016 तक ऑनलाइन आवेदन करने वाले 15 ऐसे लाभार्थी मिले जिनको आज तक ना तो लाभ मिला है और ना ही स्वीकृति, अस्वीकृति की जानकारी मिली है। लाभार्थियों ने बताया कि उन्होंने कई बार विभाग में संपर्क कर जानकारी चाही, तो यही बताया गया कि आपका लाभ मिल जाएगा लेकिन कब मिलेगा इसकी जानकारी नहीं है। जिले में सैकड़ों ऐसे आवेदक हैं जिन्होंने ऑनलाइन प्रक्रिया से आवेदन कराए परंतु लाभ नहीं मिला। विभाग की वेबसाइट पर भी पालनहार योजना संबंधी लाभार्थियों की जानकारी नहीं होना आज के संचार तकनीकी युग में हास्यास्पद सा ही लगता है। सामाजिक सुरक्षा की तमाम योजनाओं को लोगों के अधिकारों से नहीं जोड़कर कल्याणकारी, दयाभावना जैसी अवधारणा बन जाना भी इस योजना के क्रियांवयन की गंभीरता को कम कर देता है। **(विविधा फीचर्स)**

विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

खबरें संक्षेप में

दिल्ली की बस्तियों में भी भूख और अभाव से संघर्ष

• भारत डोगरा •

शाहबाद डेयरी 'ए' ब्लॉक झुग्गी की बस्ती बाहरी दिल्ली में स्थित है। यहां अधिकतर मजदूर रहते हैं। इनमें से अधिकतर निर्माण मजदूर हैं। इनमें से अधिकतर मजदूर बुंदेलखंड के महोबा क्षेत्र से हैं। वे पहले शालीमार बाग के पास रहते थे पर वह स्लम हटने के बाद यहां आकर बस गए।

वैसे तो इन मजदूरों की आय पहले भी कम थी पर नोटबंदी के बाद उनका रोजगार व आय पहले की अपेक्षा 50 प्रतिशत ही रह गए हैं। इस कारण अब अनेक परिवारों में भूख व कुपोषण की समस्या भी गंभीर रूप में उपस्थित हो गई है। इतना ही नहीं, नोटबंदी के बाद कैश की कमी की स्थिति में यहां बीमार पड़े कई लोगों का इलाज नहीं हो सका है। इस कारण यहां दो किशोरों (महेश व सोनू) तथा दो व्यस्क व्यक्तियों (दयाराम व भगवानदास) की मृत्यु हो गई। इसके अतिरिक्त हाल ही में गरीबी व अभाव से परेशान एक महिला अन्नू ने आत्म–हत्या कर ली। शौचालय न होने के कारण महिलाओं को खुले में जाना पड़ता है व असामाजिक तत्त्व उन्हें बहुत परेशान करते हैं। पेयजल सप्लाई टैंकर से है जो कम व अनिश्चित है। यहां पास के स्कूल की मरम्मत हो रही है तो बच्चे दूसरे स्कूल में जाने को मजबूर हैं। वहां से उन्हें कहा जाता है कि यहां पढ़ने मत आओ। यहां के छात्रों को वहां मारा–पीटा भी गया व कई छात्रों को चोट आई।

पश्चिम विहार से हटाए गए लोग बवाना जे जे कालोनी के 'के' और 'एल' ब्लॉक के सामने बसे हैं। उन्हें सरकार ने अभी तक पुनर्वास के कागज नहीं दिए। उन्हें अब तक राशन कार्ड भी नहीं मिले हैं। बहुत गरीबी झेल रहे इन लोगों को राशन कार्ड की बहुत जरूरत है पर उन्हें सस्ता अनाज नहीं मिल रहा है। यहां अनेक वृद्ध लाचार व्यक्तियों, विकलांग व्यक्तियों व विधवा महिलाओं को पेंशन की बहुत जरूरत है पर उन्हें पेंशन नहीं मिल रही है। यहां अनेक विकलांग बच्चों को भी सहायता की बहुत जरूरत है पर उन तक कोई पहुंचता ही नहीं है। यहां के अधिकांश निवासी भी मुख्य रूप से निर्माण मजदूर है व उनके रोजगार में नोटबंदी के बाद तेजी से कमी आई है। अतः यहां भी भूख और कुपोषण की समस्या विकट है। अस्पताल व स्कूल दूर है। तिस पर छेड़छाड़ के कारण लड़कियों के लिए स्कूल जाना और कठिन है।

बवाना जे. जे. बस्ती 'जी' और 'एच' ब्लाक में बनूवाल नगर के स्लम से हटाए गए लोग बसाए गए हैं। यहां की घरेलूकर्मी महिलाओं ने बताया कि आज तक वे पहले वाले स्थान पर 24 किमी. की दूरी तय कर रोजगार के लिए जाती हैं। अब उन्हें आराम तो बिलकुल नहीं मिलता है। पास में उद्योग तो बहुत हैं पर वे महीने में मात्र 4500 से 5000 रुपए की मजदूरी देते हैं जबकि प्रतिदिन 8 घंटे से भी ज्यादा काम करवाते हैं। यह कानूनी तौर पर मान्य पुनर्वास कॉलोनी है तो भी यहां के अधिकांश लोगों को अभी तक शौच के लिए खुले में जाना पड़ता है। पेयजल की खर्चीली व्यवस्था भी अपने स्तर पर करनी पड़ती है। सफाई की व्यवस्था भी ठीक नहीं है। ऐसी बस्तियों की बढ़ती कठिनाइयों को देखते हुए सरकार को चाहिए कि वह यहां बुनियादी सुविधाओं को ठीक से उपलब्ध करने के लिए शीघ्र समुचित कार्यवाही करे। *(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)* **(विविधा फीचर्स)**

विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

खबरें संक्षेप में

'नरेगा–बचाओ' संघर्ष का किया एलान

• विविधा फीचर्स •

प्रदेश के राजसमंद जिले के भीम तहसील के करीब 100 नरेगा मजदूरों ने 16 फरवरी को भीम तहसील के कार्यालय के सामने प्रदर्शन कर धरना देकर 'नरेगा बचाओ को एलान किया। मजदूर किसान शक्ति संगठन की ओर से आयोजित इस धरने में नरेगा मजदूरों ने कहा कि आज नरेगा में काम मिलने के कारण नरेगा की थाली खाली है। नरेगा में न्यूनतम मजदूरी 181 रुपए है। इसके बाद भी पूरी मजदूरी मजदूरों को नहीं दिया जा रहा है। नरेगा को जीवित रखने के लिए जरूरी है कि नरेगा में दिया जाना वाला दाम पूरा मिले।

धरने में काफी संख्या में महिलाएं भी आईं। नरेगा मजदूर डाक बंगले के पास इकट्ठा हुए, वहां से हाथों में तख्तियां और थालियां लेकर रैली के रूप में भीम के बाजारों से निकले और थाली बजाकर प्रशासन को जगाकर अपना विरोध दर्ज कराया। भीम पंचायत समिति की 12 से अधिक ग्राम पंचायतों से आए लोगों ने बताया कि अभी जिन लोगों ने 100 से अधिक दिन का काम ले लिया है उनको मेट एवं रोजगार सहायक पैसा वापस लौटाने के लिए दबाव बना रहे हैं। उल्लेखनीय है कि भारत सरकार द्वारा 14,487 गांवों को अभावग्रस्त घोषित किए जाने के बाद 50 अतिरिक्त दिन के रोजगार के लिए आदेश भारत सरकार के ग्रामीण विकास विभाग द्वारा जारी किए थे जो वित्तीय वर्ष 16–17 के लिए थे। राजस्थान सरकार ने हद ही कर दी। नरेगा में अतिरिक्त 50 दिन वित्तीय वर्ष 16–17 के लिए दिया था लेकिन अचानक वापस ले लिया। नरेगा में 150 दिन के रोजगार दिए जाने का आदेश ले लिया। नरेगा में 150 दिन के रोजगार दिए जाने का आदेश राज्य सरकार द्वारा 21 जून 2016 को जारी किए। इस आदेश में वर्ष 16–17 के लिए अतिरिक्त 50 दिए जाने का प्रावधान किया। सभी जिला कलक्टर को ये आदेश जारी किए। जिसके आधार पर जिलों में 100 से अधिक दिनों का रोजगार विभिन्न जिलों द्वारा लोगों को दिया गया। अचानक 29 दिसंबर 2016 को आयुक्त नरेगा द्वारा एक आदेश जारी किया जिसमें 100 से अधिक दिन का रोजगार नहीं दिए जाने और जिन जिलों में दे दिया गया है उनसे वसूली किए जाने का आदेश जारी किया गया। इसके आधार पर राजसंमद जिले के भीम व आसपास के इलाके के तो मेटों ने लोगों द्वारा किए गए काम के पैसे वापस वसूली की प्रक्रिया शुरू कर दी है।

जनसुनवाई में आए नरेगा मजदूरों ने बताया कि नरेगा में शौचालय बनवाने का नियम जबरन थोपा जा रहा है। कहा जा रहा है कि शौचालय नहीं तो नरेगा नहीं। शौचालय नहीं बनवा पाने के कारण नरेगा में काम नहीं दिया जा रहा है। लोग धन के अभाव में शौचालय नहीं बनवा पाए हैं। उनसे पहले शौचालय बनाने के लिए इतना दबाव बनाया जा रहा है जिनके घर में शौचालय नहीं है उनको नरेगा में काम ही नहीं दिया जा रहा है। **(विविधा फीचर्स)**

विविधा फीचर्स

द्वारा – विविधा : महिला आलेखन एवं संदर्भ केंद्र,
335, महावीर नगर II, महारानी फार्म, दुर्गापुरा, जयपुर–302018
फोन : 0141–2762932 ई–मेल : vividha_2001@yahoo.com वेबसाइट : Vividha.co.in संपादक – बाबूलाल नागा

अंक –370 वर्ष –16 **प्रकाशन सामग्री** 28 फरवरी 2017 से 12 मार्च 2017

खबरें संक्षेप में

असंगठित क्षेत्र में पेंशन का लंबा इंतजार

• भारत डोगरा •

हमारे देश में सरकारी कर्मचारियों व संगठित क्षेत्र के कुछ अन्य कर्मियों को तो पेंशन उपलब्ध हो जाती है, पर इस संगठित क्षेत्र के दायरे से लगभग 90 प्रतिशत लोग बाहर हैं। उनमें से बहुत कम लोगों को पेंशन मिल रही है व मिल भी रही है तो पेंशन की राशि प्रायः बहुत कम है।

असंगठित क्षेत्र के उन लोगों के लिए केंद्रीय सरकार की मुख्य स्कीम है इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धवस्था पेंशन स्कीम जिसके लिए इस वर्ष के बजट में मात्र 6127 करोड़ रुपए का प्रावधान है। यह प्रावधान पिछले वर्ष के प्रावधान 6131 करोड़ रुपए से भी कम है। इस वर्ष नोटबंदी से वृद्ध नागरिकों को काफी कठिनाइयां हुईं। अतः उम्मीद की जा रही थी कि इस वर्ष असंगठित क्षेत्र की पेंशन में महत्त्वपूर्ण वृद्धि की जाएगी, पर यह वृद्धि नहीं की गई व इसके स्थान पर थोड़ी सी कटौती की गई। इसके अतिरिक्त विधवा महिलाओं को पेंशन के लिए भी एक स्कीम है जिसे इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन स्कीम कहा जाता है। इसके लिए 2221 करोड़ रुपए की व्यवस्था पिछले वर्ष के बजट में रखी गई थी, और ठीक इतनी ही व्यवस्था इस वर्ष के बजट में भी है। इसमें जरा सी भी वृद्धि नहीं की गई है, जबकि इसमें महत्त्वपूर्ण वृद्धि की बहुत जरूरत थी।

यह बहुत दुखद स्थिति है। पेंशन के लिए बजट में कम व्यवस्था होने के कारण बहुत से जरूरतमंद वृद्ध लोगों तक पेंशन नहीं पहुंच पाती है। इसके अतिरिक्त केंद्र सरकार ने पेंशन की राशि बहुत कम रखी है। राज्य सरकारों से उम्मीद की गई है कि वे इस राशि में अपनी ओर से भी पेंशन जोड़ेंगे पर यह सदा संभव नहीं होता है और प्रायः जो राशि पेंशन के रूप में लोगों तक पहुंचती है वह बहुत अपर्याप्त होती है। इसके बावजूद वे पेंशन प्राप्त करने के लिए जितने प्रयास करते हैं, उससे पता चलता है कि उन्हें वास्तव में पेंशन की कितनी अधिक जरूरत है। इस समय देश में लगभग 10.5 करोड़ वृद्ध नागरिक हैं। यदि उन सभी को न्यूनतम मजदूरी के 50 प्रतिशत के बराबर पेंशन दी जाए तो उन्हें प्रतिमाह लगभग 2500 रुपए की पेंशन देनी चाहिए। 10 करोड़ वृद्ध नागरिकों को 2500 रुपए प्रतिमाह की पेंशन देने के लिए लगभग 3 लाख करोड़ रुपए की जरूरत है। केंद्र व राज्य सरकारें इस खर्च को आधा–आधा वहन करना स्वीकार कर सकते हैं। इस तरह सभी वृद्धों के लिए पेंशन के सपने को एक हकीकत बनाया जा सकता है।

जब तक सरकारें वृद्ध नागरिकों से न्याय की इस मांग को स्वीकार नहीं करती हैं तब तक इस मांग को लेकर एक व्यापक जन अभियान चलाना चाहिए। यूपीए सरकार के अंतिम दिनों में एक ऐसा अभियान आरंभ भी हुआ था व तब तत्कालीन राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने इसके लिए व्यक्तिगत तौर पर 15000 रुपए का चंदा दिया था। उस समय अनेक प्रमुख राजनीतिक दलों ने भी इसे समर्थन दिया था। पेंशन परिषद व उससे जुड़े जन संगठनों को चाहिए कि वह दुबारा इस अभियान को सशक्त करें। *(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)* **(विविधा फीचर्स)**

सीमेंट फैक्ट्री के लिए जबरन जमीन खाली करवाने पर तुली है सरकार

• विविधा फीचर्स •

राजस्थान के नवलगढ़ में किसान पिछले दस सालों से अपने क्षेत्र में लगने वाली तीन सीमेंट फैक्ट्रियों के विरुद्ध संघर्षरत है। गौरतलब है कि प्रशासन ने सीमेंट फैक्ट्रियों के लिए जमीन अधिग्रहण करने के लिए इस क्षेत्र की उपजाऊ जमीन को बंजर घोषित कर जमीन सीमेंट फैक्ट्रियों को दे कर किसानों के लिए जबरन मुआवजा घोषित कर दिया जबकि इस क्षेत्र के किसान किसी भी कीमत पर अपनी जमीन छोड़ना नहीं चाहते। वह पिछले दस सालों से नवलगढ़ किसान संघर्ष समिति के तहत संगठित होकर इस जबरन भूमि अधिग्रहण के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं। इस मामले में नया मोड़ तब आया जब 20 फरवरी को कलक्टर ने अधिकारियों को किसानों से जमीन किसी भी सूरत में खाली करवाने के आदेश दे दिए। कलक्टर ने कहा कि यदि किसान समझाने पर न माने तो पुलिस की मदद से जमीन जबरन खाली करवाई जाए। कलक्टर के इस आदेश से क्षेत्र के किसान भड़के हुए हैं। किसानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि यदि सरकार जबरन जमीनें खाली करवाएंगी तो किसान भी इसका कड़ा प्रतिरोध करेंगे। 23 फरवरी को भूमि अधिग्रहण विरोधी किसान संघर्ष समिति नवलगढ ने एसडीएम के माध्यम से मुख्यमंत्री के नाम ज्ञापन दिया गया है जिसमें किसानों ने एक बार फिर जमीन नहीं देने का वादा दोहराया । **(विविधा फीचर्स)**